ब्रह्मपुराण में शिवतत्त्व

ब्रह्मपुराण पुराणों की सूची में पहले स्थान पर है। नारदपुराण(पूर्वख. 92/31) के अनुसार इसमें दस हजार तथा मत्स्यपुराण(53/12-13) के अनुसार तेरह हजार श्लोक हैं। परन्तु इसमें श्लोकों की वर्तमान संख्या 14000 के आस-पास तथा अध्यायों की 246 हैं। इस ग्रन्थ के कतिपय अध्याय महाभारत के शान्तिपर्व के कुछ अध्यायों से अक्षरश: अथवा थोड़े-बहुत हेर-फेर के साथ मेल खाते हैं। पद्मपुराण(उत्तरख. 236/20-21) के अनुसार इसे राजस पुराण माना जाता है। मत्स्य पुराण(53/67) के अनुसार राजस पुराणों में ब्रह्माजी के माहात्म्य का वर्णन प्रधान होता है। परन्तु इस ग्रन्थ में परम्परागत मान्यता से हटकर विष्णु के चरित्रों की चर्चा अन्य देवों से बढ़कर की गयी है। विष्णु की चर्चा विस्तार से होने के बावजूद भी प्रसंगवश जहाँ शिवजी की चर्चा की गयी है वहाँ उन्हें परब्रह्म परमात्मा स्वीकार किया गया है।

भगवान् शिव का स्वरूप

पार्वती की कठोर तपस्या से प्रभावित हो ब्रह्माजी प्रकट हो पार्वती से तप के कारण को जान उनसे कहते हैं कि "भगवान् शंकर ही सर्वश्रेष्ठ पति हैं। वे सम्पूर्ण लोकेश्वरों के भी ईश्वर हैं। हम सदा ही उनके अधीन रहनेवाले किंकर हैं। देवि! वे देवताओं के भी देवता, परमेश्वर और स्वयम्भू हैं। उनका स्वरूप बड़ा ही उदार है। उनकी समानता करनेवाला कहीं कोई भी नहीं है।"[1]

ब्रह्माजी पार्वतीस्वयंवर में शिशुरूपधारी भगवान् शिव को पहचानकर उनकी स्तुति करते हुए कहते हैं- "भगवन्! आप अजन्मा एवं अजर देवता हैं, आप ही जगत् के स्रष्टा, सर्वव्यापक, परावर-स्वरूप, प्रकृति-पुरुष तथा ध्यान करनेयोग्य अविनाशी हैं। अमृत, परमात्मा, ईश्वर, महान् कारण, मेरे भी उत्पादक, प्रकृति के स्रष्टा, सबके रचयिता और प्रकृति से भी परे हैं।..............देवेश्वर! आपके ही प्रसाद एवं आदेश से मैंने इन देवता आदि प्रजाओं की सृष्टि की है। ये देवगण आपकी माया से मोहित हो रहे हैं। आप इनपर कृपा कीजिये जिससे ये पहले-जैसे हो जायँ।"

अजस्त्वमजरो देवः स्रष्टा विभुः परापरम्।।
प्रधानं पुरुषो यस्त्वं ब्रह्म ध्येयं तदक्षरम्।
अमृतं परमात्मा च ईश्वरः कारणं महत्।।
ब्रह्मसृक् प्रकृतेः स्रष्टा सर्व्वकृत्प्रकृतेः परः।
..
प्रसादात्तव देवेश नियोगाच्च मया प्रजाः।
देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा मूढास्त्वद्योगमायया।।
..। (ब्रह्मपु. 36/39-41, 43)

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक, कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर पृ. 330 या ब्र. पु. 34/99-101 देखें।

आगे शिव-विवाह के उपरान्त देवों ने शिव की स्तुति की। स्तुति में वे कहते हैं- "पर्वत जिनका लिंगमय स्वरूप है, ... जिनका वेग पवन के समान है, ...अपराजित हैं, जो क्लेशों का नाश करके शुभ-सम्पत्ति प्रदान करते हैं, ... वायु जिनका स्वरूप है और जो सैकड़ों रूप धारण करनेवाले हैं, ... योगियों के गुरु, सूर्य एवं चंद्रमा जिनके नेत्र हैं, ... श्मशान में क्रीड़ा करते और वर देते, ...देवेश्वर शिव................, जो गृहस्थ होते हुए भी साधु हैं, नित्य जटा एवं ब्रह्मचर्य धारण करनेवाले ...., भोगजनित ऐश्वर्य देते, मन को शान्त रखते, इन्द्रियों का दमन करते तथा प्रलय एवं सृष्टि के कर्त्ता हैं। ....रुद्र, वसु, आदित्य और अश्विनीकुमारों के रूप में वर्त्तमान भगवान् शंकर ....जो सबके पिता, सांख्य वर्णित पुरुष, विश्वेदेव, ...पशुपति, ... प्रधान, अप्रमेय, कार्य और कारण नाम से प्रतिपादित होते हैं, ... आप ही पुरुष एवं प्रकृति का संयोग कराते और आप ही प्रकृति में गुणों का आधान करानेवाले हैं। .... आप प्रकृति और पुरुष के प्रवर्तक, कार्य और कारण के विधायक तथा कर्मफलों की प्राप्ति करानेवाले हैं। .... आप काल के ज्ञाता, सबके नियन्ता .... प्रजावर्ग को जीविका प्रदान करनेवाले हैं। आपको नमस्कार है।" (ब्रह्मपुराण 37/2-22)

यज्ञ का विध्वंस करते समय वीरभद्र द्वारा दी गयी सलाह पर दक्ष ने भगवान् शिव की मानसिकरूप से शरण ली। दक्ष के ध्यान एवं स्मरण से भगवान् शिव वहाँ प्रकट हो गये तथा उन्हें यथोचित वरदान दिया। वरदान पाकर दक्ष ने पृथ्वी पर घुटने टेककर भगवान् शिव की 1008 नामों द्वारा स्तुति की।[1] इस स्तुति में भगवान् शिव को देवेन्द्र, देव-दानवों द्वारा पूजित, सहस्राक्ष, त्र्यक्ष, सब ओर हाथ, पैर, नेत्र, कान, मस्तक और मुखवाला, सबको व्याप्त करके स्थित, सनातन, गायत्री के उपासक जिसका गान करते हैं, सूर्य के भक्त जिनकी सूर्यरूप में उपासना करते हैं, देव-दानव-रक्षक, ब्रह्मा तथा इन्द्ररूप, जिसमें सम्पूर्ण देवता निवास करते हैं, जिसके शरीर में चन्द्रमा, अग्नि, वरुण, सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा तथा बृहस्पति स्थित हैं, जो क्रिया, करण, कार्य, कर्त्ता, कारण, असत्, सदसत्, उत्पत्ति तथा प्रलय हैं, सृष्टिकर्त्ता, रुद्र, वरद, पशुपति, त्रिशूलधारी, विरूप होते हुए भी जो शिव हैं, सर्वस्वरूप, सर्वभूतों के अन्तरात्मा, होम एवं मन्त्ररूप, दसभुजावाले, कपालधारी, श्वेत-भस्मधारी, घोर, अघोर, शान्त, शुद्ध बुद्धिरूप, यज्ञों के अधिपति, शुद्ध, बुद्ध, सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय करनेवाले, धर्म-मोक्षादि देनेवाले, योग के अधिपति, चारों प्रकार के जीवरूप, ब्रह्मवादी जिन्हें ऋक्, साम तथा ॐकार कहते हैं, चारों वेदस्वरूप, उपनिषद् जिनके स्वरूप का अध्ययन करते हैं, गदा, बाण, धनुष आदि धारण करनेवाले, जो आदि, मध्य और अन्त, गायत्री और ॐकार भी हैं, त्रिसौपर्ण ऋचा और यजुर्वेद का शतरुद्रिय जिसका स्वरूप है, सब भूतों में संचालकरूप से जो स्थित है, ब्रह्म, सत्य, सम्पूर्ण

1. यह स्तुति महाभारत के शान्तिपर्व (मोक्षधर्मपर्व 284/69-180) में वर्णित दक्षस्तुति से मिलती-जुलती है। कई श्लोक तो ज्यों के त्यों हैं, कुछ में थोड़ा-बहुत परिवर्तन है तथा कुछ श्लोक नवीन भी हैं।

भूतों की आत्मा, ब्रह्मा, विष्णु तथा प्राचीन ऋषियों द्वारा भी जो अगम्य है, सर्वस्वरूप, सम्पूर्ण भूतों के स्वामी, सबकी उत्पत्ति के कारण, सबकी अन्तरात्मा आदि संज्ञाओं एवं विशेषणों से युक्त स्वीकार किया गया है(ब्रह्मपु. 40/2-100)। इस स्तोत्र की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

गायन्ति त्वां गायत्रिणो अर्चयन्त्यर्कमर्किणः।
देवदानवगोप्ता च ब्रह्मा च त्वं शतक्रतुः।।
त्वमेव देवदेवश भूतग्रामश्चतुर्विधः।
चराचस्य स्त्रष्टा त्वं प्रतिहर्ता त्वमेव च।।
त्वमेव ब्रह्मा विश्वेश अप्सु ब्रह्म वदन्ति ते।
सर्वस्य परमा योनिः सुधांशो ज्योतिषां निधिः।।
ऋक्सामानि तथोङ्कारमाहुस्त्वां ब्रह्मवादिनः।
न ब्रह्मा न च गोविन्दः पुराणऋषयो न च।
माहात्म्यं वेदितुं शक्ता याथातथ्येन ते शिवः।।
सर्वस्त्वं सर्वगो देवः सर्वभूतपतिर्भवः।
सर्वभूतान्तरात्मा च .... ।।(ब्रह्मपु. अध्याय 40/6, 42-44, 83, 97)

भावार्थ है-गायत्री के उपासक आपका(शिवका) ही गान करते हैं। सूर्य के भक्त आपकी ही सूर्यरूप में उपासना करते हैं। आप देवता तथा दानवों के रक्षक, ब्रह्मा तथा इन्द्र हैं। देव देवेश्वर! आप ही जरायुज, अण्डज, स्वेदज, और उद्भिज- ये चार प्रकार के जीव हैं। चराचर जगत् की सृष्टि एवं संहार करनेवाले आप ही हैं। विश्वेश्वर! आप ही ब्रह्मा हैं। जल में स्थित जो ब्रह्म है, उसे आपका ही स्वरूप बताते हैं। आप ही सबकी परम योनि हैं। चन्द्रमा और ज्योति के भंडार भी आप ही हैं। ब्रह्मवादी महर्षि आपको ही ऋक्, साम तथा ॐकार कहते हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा प्राचीन ऋषि भी आपके माहात्म्य को यथार्थरूप से जानने में समर्थ नहीं हैं। आप सर्वस्वरूप, सर्वव्यापी देवता, सम्पूर्ण भूतों के स्वामी, सबकी उत्पत्ति के कारण तथा सम्पूर्ण भूतों के अन्तरात्मा हैं।

गौतम ऋषि ने गौतमी गंगा को धरती पर उतारने के लिये कैलास पर जाकर भगवान् शिव की स्तुति की, फलस्वरूप नर्मदा का धरती पर अवतरण हुआ। उन्होंने अपनी स्तुति में (पार्वती सहित) भगवान् शिव को पृथ्वी, जल आदि आठ विराट्स्वरूप(मूर्ति) धारण करनेवाला कहा है। पृथ्वी का रूप समस्त चराचर जगत् का भरण-पोषण करनेवाला तथा सबका अभ्युदय कराने के लिये है। जल का रूप लोगों को सुख पहुँचाने तथा धर्म की सिद्धि करने का हेतु है। महेश्वर! आपने समय की व्यवस्था करने, सृष्टि, पालन एवं संहार करने, तथा प्रजा को सुख एवं उन्नति का अवसर देने के लिये सूर्य, चन्द्रमा तथा अग्नि का रूप धारण किया है। आपने शक्ति का उपार्जन तथा अक्षरों का उच्चारण आदि करने के लिये वायुरूप धारण किया है। क्रिया, भेद या विभाजनहेतु ही आकाश का रूप धारण किया

है। धर्मसाधन के लिये चारों वेद, उनकी शाखाओं और शास्त्रों का विभाजन भी आपने किया है। यज्ञ, यजमान, यज्ञ के साधन आदि सब-कुछ आप ही हैं। आप ही परमार्थतत्त्व हैं। कर्त्ता, दाता, दान, सर्वज्ञ, साक्षी, परम पुरुष, सबका अन्तरात्मा तथा परमार्थस्वरूप सब कुछ आप ही हैं। वेद, शास्त्र और गुरु भी आपके तत्त्व का भली-भाँति उपदेश नहीं कर सके हैं। आप बुद्धि आदि की पहुँच के परे, अजन्मा, अप्रमेय, सत्य तथा शिव कहे जाते हैं। शिव अपनी प्रकृति के प्रति सचेत होने के कारण ही एक से अनेक हो विश्वरूप में प्रकट हो जाते हैं। शिवजी का प्रभाव अतर्क्य और अचिन्त्य है। भगवान् शिव की प्रिया शिवा देवी भी नित्य हैं। वे(शिवा) इस संसार की उत्पत्ति में स्वयं कारण हैं, तथा सर्वकारण महेश्वर के आश्रित हैं। शिवा समस्त शुभ लक्षणों से सम्पन्न तथा विश्वविधाता शिव की विलक्षण शक्ति हैं। श्रुतियों को देखकर तथा सब प्रमाणों से भगवान् शिव की प्रभुता पर विश्वास कर लोग जो धर्मों का अनुष्ठान करते और फलस्वरूप जो उत्तम भोग भोगते हैं वे सब भगवान् सदाशिव की विभूतियाँ हैं। वैदिक तथा लौकिक कार्य, क्रिया, कारक और साधनों का जो सबसे उत्तम एवं प्रिय साध्य है, वह अनादि कर्त्ता शिव की प्राप्ति ही है। जो सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म, परप्रधान, सारभूत और उपासना के योग्य है, जिसका ध्यान तथा जिसकी प्राप्ति करके श्रेष्ठ योगी पुरुष मुक्त हो जाते हैं-वे भगवान् उमापति ही मोक्ष हैं। माता पार्वती! भगवान् शंकर जगत्कल्याण के लिये जैसे-जैसे अपार मायामय रूप धारण करते हैं, वैसे-ही-वैसे तुम भी उनके योग्य रूप धारण करती हो।[1]

एक स्थल पर इला और पुरूरवा भगवान् शिव की स्तुति में कहते हैं कि-संसार के त्रिविध ताप-रूपी दावानल से दग्ध होनेवाले देहधारी जिनका चिन्तन करने से तत्काल परम शान्ति को प्राप्त होते हैं, वे कल्याणकारी उमा-महेश्वर हमें शरण दें। जिनसे जगत् की उत्पत्ति होती है तथा प्रलयकाल में यह सब जिनके ही भीतर लय हो जाता है, वे संसार को शरण देनेवाले जगदात्मा उमा-महेश्वर हमें शरण दें।[2]

किसी प्रसंग में बृहस्पति भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें परम सूक्ष्म, ज्योतिर्मय, अनन्त, ओंकार मात्र से अभिव्यक्त, प्रकृति से परे, चित्स्वरूप, आनन्दमय और पूर्णरूप बतलाते हैं। भगवान् शिव ही पंचमहायज्ञों द्वारा उपास्य हैं। वे रुद्र, शिव और सोम आदि नामों से पुकारे जाते हैं। शिव की भक्ति से मूर्ख भी मोक्षमयस्वरूप को प्राप्त कर लेता है। यज्ञ, ज्ञान, तप, ध्यान तथा बड़े-बड़े फल देनेवाले होम आदि कर्मों का सर्वोत्तम फल भगवान् सोमनाथ की भक्ति है। सभी प्रकार के सांसारिक भोगों, स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति भगवान् शिव की भक्ति से ही संभव है। भगवान् शिव स्थूल, सूक्ष्म, अनादि, नित्य, माता, पिता, असत् और सत्स्वरूप हैं-ऐसा श्रुतियों और पुराणों ने गाया है(ब्रह्मपुराण, अध्याय 122/74-82)।

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय एवं ब्रह्मपुराणांक पृ. 385-86 या ब्रह्मपुराण 75/4-24 देखें
2. संक्षिप्त मार्कण्डेय एवं ब्रह्मपुराणांक पृ. 413 या ब्रह्मपुराण 108/105-107 देखें

दण्डक वन के राक्षसों का संहार करके उसे भगवान् राम ने ऋषि-मुनियों के रहने योग्य बनाकर पाँच योजन आगे चलकर गौतमी गंगा के तटपर पहुँचे। वहाँ पहुँचकर श्रीराम ने बड़े हर्ष के साथ महादेवजी की स्थापना की और यत्नपूर्वक षोडषोपचार से 36 कलाओंवाले महादेवजी की आवरण सहित पूजा करके उनकी स्तुति की। उस स्तुति में उन्हें पुराणपुरुष, असीम एवं अनन्त सत्ता, सर्वज्ञ, अविनाशी, लोकगुरु, दरिद्रता का विनाश करनेवाले, रोगों का अपहरण करनेवाले, अचिन्त्य रूपवाले, कल्याणमय, विश्व की उत्पत्ति के बीजभूत, जगत् का पालन करनेवाले, परमात्मा, संहारकारी, नित्य, क्षर-अक्षरस्वरूप, चिन्मय, अप्रमेय, त्रिलोचन, मनोवांछित फलों के दाता, महेश्वर, उमानाथ, तीन वेद जिनके नेत्र हैं, त्रिविध मूर्ति से रहित सदाशिव, सत्-असत् से पृथक्, परमात्मा, पापों का अपहरण करनेवाले, संपूर्ण विश्व के हित में लगे रहनेवाले, बहुत से रूप धारण करनेवाले, संसार के रक्षक, सत् और असत् के निर्माता, संपूर्ण विश्व से स्वामी, हव्य-कव्यरूप, यज्ञेश्वर, उत्तम गति प्रदान करनेवाले, भक्तों के अधीन रहनेवाले, गणेश तथा नन्दी के स्वामी, संसार के दुःख-शोक का नाश करनेवाले, स्तुति करने योग्य, शिर पर गंगा धारण करनेवाले, देवताओं में श्रेष्ठ और ब्रह्मा आदि ईश्वर, इन्द्रादि देवता तथा असुरों द्वारा पूज्य कहा गया है (123/195-205)। राम द्वारा की गयी स्तुति के कुछ अंश इस प्रकार हैं-

नमामि शंभुं पुरुषं पुराणं, नमामि सर्वज्ञमपारभावम्।
नमामि रुद्रं प्रभुमक्षयं तं, नमामि शर्वं शिरसा नमामि।।
नमामि वेदत्रयलोचनं तं, नमामि मूर्तित्रयवर्जितं तम्।

....

यज्ञेश्वरं संप्रति हव्यकव्यं, तथा गतिं लोकसदाशिवो यः।
नमाम्यजादीशपुरन्दरादिसुरासुरैरर्चितपादपद्मम्।

(ब्रह्मपुराण 123/195, 200, 202 एवं 205)

भावार्थ यह है कि-मैं पुराणपुरुष शम्भु को नमस्कार करता हूँ। जिनकी असीम सत्ता का कहीं पार या अन्त नहीं है, उन सर्वज्ञ एवं अक्षय प्रभु शिव को मैं प्रणाम करता हूँ। तीन वेद जिनके तीन नेत्र हैं, उन त्रिलोचन को प्रणाम करता हूँ। त्रिविधमूर्ति से रहित सदाशिव को नमस्कार करता हूँ। हव्य-कव्य-स्वरूप यज्ञेश्वर को नमस्कार करता हूँ। सम्पूर्ण लोकों का सर्वदा कल्याण करनेवाले भगवान् शिव आराधना करने पर उत्तम गति एवं संपूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ प्रदान करते हैं। ब्रह्मा आदि ईश्वर, इन्द्र आदि देवता तथा असुर भी जिनके चरणकमलों की पूजा करते हैं उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ।

पुत्रतीर्थ के प्रसंग में कश्यप अपनी स्तुति में भगवान् शिव को लोकवन्दित परमेश्वर, सबको पवित्र करनेवाले, सर्पों का आभूषण धारण करनेवाले, धर्मस्वरूप वृषभ पर सवारी करनेवाले, तीन वेद

जिनके नेत्र हैं, गजचर्म धारण करनेवाले, अर्धचन्द्र से विभूषित, यज्ञेश्वर, मनोवांछित फलों के दाता, करुणाधाम, मंगलदाता, सबकी उत्पत्ति के हेतुभूत, परमात्मा, पालन करनेवाले, वासव, ब्रह्म-वन्दित, विश्वेश्वर, सिद्धेश्वर और पूर्ण परमेश्वर कहा है। आगे भगवान् शिव को अनादि, अपार, अजर, सच्चिदानन्दमय, लिंगस्वरूप, ज्योतिर्मय तथा अनामय कहा गया है।(ब्रह्मपु. अध्याय 124/94-99 आदि)

इन्द्रतीर्थ के प्रकरण में इन्द्र भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें अपनी माया से सम्पूर्ण चराचर जगत् की सृष्टि, रक्षा और संहार करनेवाला पर उनमें अनासक्त, एक, स्वतंत्र तथा अद्वैत चिदानन्दस्वरूप, पिनाकधारी, वेदान्त के रहस्यों को जाननेवाले सनकादि मुनियों द्वारा भी जिनका तत्त्व अगम्य है, अभीष्ट वस्तुओं के दाता, अन्धकासुर विनाशक तथा शिव-शक्तिमय अद्वैत रूपधारी कहा है(ब्रह्मपु. 129/68-81)। इन्द्रकृत शिवस्तुति के कुछ अंश देखिये-

स्वमायया यो ह्यखिलं चराचरं, सृजत्यवत्यत्ति न सज्जतेऽस्मिन्।
न यस्य तत्त्वं सनकादयोऽपि, जानन्ति वेदान्तरहस्यविज्ञाः।
शिवशक्त्योस्तदाऽद्वैतं सुन्दरं नौमि विग्रहम्॥ (ब्रह्मपुराण 129/68-69, 81)

भावार्थ है-जो अपनी माया से सम्पूर्ण चराचर जगत् की सृष्टि, रक्षा और संहार करते हैं, किंतु उसमें आसक्त नहीं होते। वेदान्त के रहस्यों को भलीभाँति जाननेवाले सनकादि मुनि भी जिनके तत्त्व को ठीक-ठीक नहीं जानते। शिव और शक्ति के सुन्दर अद्वैत रूप को सर्वदा नमस्कार करते हैं।

आपस्तम्ब भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें काष्ठों में अग्नि तथा फूलों में सुगंध की तरह, संपूर्ण भूतों में आत्मारूप से छिपे रहनेवाले, लीलापूर्वक विश्व की रचना करनेवाले, तीनों लोकों के भरण-पोषण करनेवाले, विश्वरूप, सत्-असत् से परे, दरिद्रता तथा रोग दूर कर अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेवाले, ब्रह्मादि देवताओं को नियुक्त करनेवाले, संपूर्ण देवों को हवि प्रदान करनेवाले, जिनसे बढ़कर न कोई उत्तम, न ही सूक्ष्म और न ही महान् वस्तु है, जिनकी आज्ञा से यह विचित्र, अचिन्त्य और नाना प्रकार का महान् विश्व एक ही कार्य में संलग्न हो निरन्तर परिचालित रहता है, जिनमें ऐश्वर्य, सबका आधिपत्य, कर्तृत्व, दातृत्व, महत्त्व, प्रीति, यश और सौख्य-ये अनादि धर्म हैं, जो सदा शरण लेने योग्य, सबके पूजनीय, शरणागत के प्रिय, नित्य कल्याणमय तथा सर्वस्वरूप हैं-ऐसा कहा है(ब्रह्मपुराण 130/23-31)। उपरोक्त स्तुति के एकाध श्लोक देखिये।

काष्ठेषु वह्निः कुसुमेषु गन्धो, बीजेषु वृक्षादि दृषत्सु हेम।
भूतेषु सर्वेषु तथास्ति यो वै, तं सोमनाथं शरणं व्रजामि॥
येन त्रयीधर्ममवेक्ष्य पूर्वं, ब्रह्मादयस्तत्र समीहिताश्च।
एवं द्विधा येन कृतं शरीरं, सोमेश्वरं तं शरणं व्रजामि॥ (ब्रह्मपु. 130/23, 26)

भावार्थ है-जो काष्ठों में अग्नि, फूलों में सुगन्ध, बीजों में वृक्ष आदि, पत्थरों में सुवर्ण तथा

सम्पूर्ण भूतों में आत्मारूप से छिपे रहते हैं, उन भगवान् सोमनाथ की मैं शरण लेता हूँ। जिन्होंने पहले तीनों वेदों में वर्णित धर्म का साक्षात्कार करके उसमें ब्रह्मादि देवताओं को नियुक्त किया और इस प्रकार जिन्होंने दो शरीर धारण किये, उन भगवान् सोमनाथ की मैं शरण लेता हूँ।

व्यासतीर्थ के प्रसंग में ब्रह्माजी नारदजी से कहते हैं कि सर्वस्वरूप शिव, जो व्यापक तथा सम्पूर्ण भावपदार्थों का रूप धारण करनेवाले हैं, समस्त प्राणियों पर कृपा करने के लिये व्यास तीर्थ में निवास करते हैं। (संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 458 तथा ब्र. पु. 158/38)

ऊपर के उद्धरणों में भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों की झलक मिलती है। निर्गुण-रूप में भगवान् शिव परात्पर ब्रह्म या दार्शनिकों के ब्रह्म हैं। सगुणरूप में वे त्रिनेत्रधारी, पंचानन, दस भुजावाले, सर्पों के आभूषण धारण करनेवाले, चन्द्रमा एवं गंगा को शिर पर धारण करनेवाले, गज या व्याघ्रचर्म धारण करनेवाले, त्रिशूल, डमरू, पिनाक आदि को धारण करनेवाले, परम दयालु, कैलासवासी, जगत् के स्रष्टा, पालनकर्त्ता एवं संहारकर्त्ता हैं। वे ही भोग एवं मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं। ऊपर दिये गये उद्धरण ब्रह्माजी, देवगण, दक्ष प्रजापति, इन्द्र, भगवान् राम, देवगुरु बृहस्पति, ऋषि श्रेष्ठ गौतम एवं आपस्तंब, कश्यप, इला एवं पुरुरवा जैसे लोगों की स्तुतियों से लिये गये हैं। इन सब महानुभावों की दृष्टि में भगवान् शिव के तत्त्व का जैसा उद्‌गार इनकी स्तुतियों में प्रकट किया गया है उसका ही सार ऊपर दिया गया है। इन लोगों के अनुसार भगवान् शिव ही परमतत्त्व हैं जिनसे समस्त चराचर जगत् का विकास हुआ है तथा अन्त में उन्हीं में लीन हो जायगा।

भगवान् शिव की उपासना

भगवान् शिव को अर्थ, धर्म, काम, स्वर्ग, मोक्ष, भोग आदि प्रदान करनेवाला कहा गया है। निम्नलिखित संदर्भों से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

'**धर्मकामार्थमोक्षाय ....**' अर्थात् जो (भगवान् शिव) धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूप हैं (40/35), '**मूर्खोऽपि शंभो तव पादभक्तया, समाप्नुयान्मुक्तिमयीं तनुं ते**' अर्थात् शिव के चरणों में भक्ति रखने से मूर्ख मनुष्य भी मोक्षमयस्वरूप को प्राप्त कर लेता है (122/78), '**नमामि दारिद्र्य विदारणं तं, नमामि रोगापहरं**' अर्थात् दरिद्रता को नष्ट करनेवाले तथा रोगों को दूर करनेवाले (शंकर) को नमस्कार (123/196), '**नमामि दातारमभीप्सितानां**', '**नमामि देवं भवदुःखशोकविनाशनं**' अर्थात् इच्छित मनोरथ प्रदान करनेवाले तथा संसार के दुःख एवं शोक को नष्ट करनेवाले (123/199 तथा 204) और '**सांसरतापत्रयदावदग्धाः, शरीरिणो यौ परिचिन्तयन्तः। सद्यः परां निर्वृतिमाप्नुवन्ति ....**' अर्थात् संसार के त्रिविध तापरूपी दावाग्नि से दग्ध व्यक्ति जिस शिव-पार्वती का ध्यान कर तत्काल उससे मुक्त हो जाते हैं............ (108/105)।

अगस्त्यजी आपस्तम्ब को एक स्थल पर स्पष्ट कह रहे हैं कि यद्यपि तीनों (ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव) देवों में परस्पर भेद नहीं है तो भी आनंददाता शिव से ही सब प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

.... अतः तुम भगवान् शिव की साधना करो।

यद्यप्येषां न भेदोऽस्ति देवानां तु परस्परम्।

तथाऽपि सर्वसिद्धिः स्याच्छिवादेव सुखात्मनः।।

...।

तमेव साधयं हरं भक्त्या परमया मुने।। (ब्रह्मपु. 130/17-18)

ब्रह्माजी सिद्धतीर्थ के प्रसंग में कहते हैं कि इस संसार में श्रीहीन, विपदग्रस्त तथा अनेक क्लेशों को भोगनेवाले मनुष्यों के एकमात्र शिव ही शरण हैं, दूसरा कोई नहीं।

निःश्रीकाणां विपन्नानां नानाक्लेशजुषां नृणाम्।

शरणं शिव एवात्र संसारेऽन्यो न कश्चन।। (ब्रह्मपु. 143/5)

उनकी उपासना से अनेक देवता, असुर, मनुष्य आदि लोगों ने अपना-अपना अभीष्ट प्राप्त किया है। दुःख के समुद्र में डूबनेवाले अनाथ मनुष्यों के लिये भगवान् शिव शरणदाता हैं। उनकी भक्ति से ऐसा कोई भी कार्य नहीं है जो सिद्ध न हो सके (ब्र. पु. 129/50)।

भगीरथ ने गंगा लाने के लिये कपिल मुनि की सलाह के अनुसार कैलास पर जाकर भगवान् शिव की आराधना की, फलस्वरूप गंगा को धरती पर ला सके।

कैलासं तं नरश्रेष्ठ गत्वा स्तुहि महेश्वरम्।

तपः कुरु यथाशक्ति ततश्चेप्सितमाप्स्यसि।। (ब्रह्मपु. 78/54)

महर्षि गौतम के सखा ब्राह्मण श्वेत की शिवपूजा से मृत्यु भी पराजित हो गयी। कथा इस प्रकार है-श्वेत भगवान् शिव की पूजा तथा ध्यान में सदा व्यस्त रहते थे। एक बार शिव के भजन के दौरान ही उनकी आयु पूरी हो गयी। तब यमराज के दूत उन्हें लेने के लिये आये, पर ब्राह्मण देवता के घर में वे प्रवेश न कर सके। जब ब्राह्मण की मृत्यु का समय बीत गया तब चित्रक ने मृत्यु से पूछा कि अभीतक श्वेत क्यों नहीं आया? तुम्हारे दूत भी अभीतक नहीं लौटे। यह सुनकर मृत्यु को बड़ा क्रोध हुआ और वे स्वयं ही श्वेत के घर पधारे। उनके दूत भयभीत हो बाहर ही खड़े थे। मृत्यु ने अपना फंदा हाथ में लेकर स्वयं ही ब्राह्मण के घर में प्रवेश किया। ब्राह्मण भक्तिपूर्वक भगवान् शिव की पूजा में लीन थे, उन्हें न तो मृत्यु के आने का पता था और न यमदूतों का। श्वेत के समीप मृत्यु को खड़ा देख दण्डधारी भैरव ने उन्हें मार गिराया। मृत्यु को मरा देख चित्रगुप्त आदि के साथ सेना लेकर यमराज स्वयं उस स्थान पर पधारे। पर उन सबको शिवगणों ने मृत्यु के घाट पहुँचा दिया।

तदनन्तर देवताओं ने भगवान् शिव को स्तुति द्वारा प्रसन्न किया तथा यमराज आदि को पुनः जीवनदान दिलाया। उस अवसर पर भगवान् शिव कहते हैं कि जो मेरे भक्त हैं उनके स्वामी हम स्वयं ही हैं। मृत्यु का उनके ऊपर कोई अधिकार नहीं है। यमराज को तो कभी उनकी बाततक नहीं चलानी चाहिये। व्याधि-आधि के द्वारा उनका पराभव करना कदापि उचित नहीं है। जो मेरी शरण में आ जाते

हैं, वे तत्काल मुक्त हो जाते हैं।[1] (ब्र. पु. 94/39-41)

मद्भक्तानां वैष्णवानां गौतमीमनुसेवताम्।।
वयं तु स्वामिनो नित्यं न मृत्युः स्वाम्यमर्हति।
वार्ताऽप्येषां न कर्तव्या यमेन तु कदाचन।।
आधिव्याध्यादिभिर्जातु कार्यो नाभिभवः क्वचित्।
ये शिवं शरणं यातास्ते मुक्तास्तत्क्षणादपि।। (ब्र. पु. 94/39-41)

शुक्राचार्य ने भगवान् शिव को प्रसन्न कर मृतसंजीवनी विद्या प्राप्त की जिसका ज्ञान देवताओं को भी नहीं था। उन्हें शिवजी ने लौकिकी, वैदिकी एवं अन्यान्य विद्याएँ भी दी। बृहस्पति के पुत्र कच ने शुक्राचार्य से मृतसंजीवनी विद्या को प्राप्त किया फिर कच से बृहस्पति ने और बृहस्पति से पृथक-पृथक देवताओं ने।(ब्र. पु. 95/26-30)

भगवान् विष्णु ने चक्रतीर्थ पर शिव-आराधना से सुदर्शन चक्र को प्राप्त किया था इसीलिये इसे चक्रतीर्थ कहते हैं।

यत्र विष्णुः स्वयं स्थित्वाचक्रार्थं शंकरं प्रभुः।
पूजयामास तत्तीर्थं चक्रतीर्थमुदाहृतम्।। (ब्रह्म पु. 109/2)

सिद्धेश्वर नामक लिंग की स्तुति-पूजा बृहस्पति ने इन्द्र के राज्य की स्थिरता के लिये किया था(ब्रह्मपु. अध्याय 122 श्लोक 65-67)। इन्द्र ने अपने शत्रु महाशनि से भी शिवोपासना द्वारा मुक्ति पायी थी(ब्र. पु. अध्याय 129)। महर्षि गौतम ने शिवोपासना से गौतमी गंगा(गोदावरी) को प्राप्त किया।[2] सिद्धेश्वर लिंग के प्रभाव से रावण अत्यन्त प्रबलता को प्राप्त किया(ब्र. पु. अध्याय 157/21 तथा अध्याय 143)। बुध की पत्नी इला को पुरुषत्व की प्राप्ति भी शिव-आराधना से हुई।[3] देवताओं की प्रार्थना पर शिव ने असुरों का संहार किया तथा कालकूट विष का पान किया था(ब्र. पु. अध्याय 112)। भगवान् राम ने शिव की स्तुति कर अपने कार्यों को सिद्ध किया(ब्र. पु. अध्याय 123/193-211)। इस प्रकार अनेक लोगों को शिव-उपासना से भोग एवं मोक्ष की प्राप्ति हुई है।

भगवान् शिव की लिंगरूप में पूजा को ही इस पुराण में महत्त्व दिया गया है। इस पुराण में गोदावरी तटवर्ती अनेक शैवतीर्थों का भी वर्णन विस्तार के साथ है। इन तीर्थों पर ऋषि-मुनि, देव, मनुष्य आदि ने शिवलिंग स्थापित कर उपासना की है। इन तीर्थों में कुछ की चर्चा नीचे की जा रही है।

एकाम्रकक्षेत्र(वर्त्तमान भुवनेश्वर के आस-पास का क्षेत्र) सब पापों को हरनेवाला पवित्र एवं परम दुर्लभ है। एकाम्रक नाम से विख्यात क्षेत्र वाराणसी के समान कोटि शिवलिंगों से युक्त एवं शुभ

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 403
2. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 385-388 या ब्र. पु. अध्याय 75 देखें
3. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 413 या ब्र. पु. अध्याय 108 देखें

है। उसमें आठ तीर्थ हैं।

लिङ्गकोटिसमायुक्तं वाराणसीसमं शुभम्।
एकाम्रकेति विख्यातं तीर्थाष्टकसमन्वितम्।। (ब्रह्मपु. 41/11)

उस क्षेत्र में भगवान् शंकर सब लोकों का हित करने के लिये निवास करते हैं।

आस्ते तत्र स्वयं देवः कृत्तिवासा वृषध्वजः।।
.... (ब्रह्मपु. 41/50)

भोग एवं मोक्ष के दाता शिव ने लोककल्याण के लिये इस पृथ्वी पर जितने तीर्थ, नदियाँ, सरोवर, कूप, सागर आदि हैं उन सबसे पृथक-पृथक जल की बूँदे संगृहीत करके उस क्षेत्र में बिन्दुसर नामक तीर्थ स्थापित किया। अगहन के कृष्णपक्ष की अष्टमी को जो वहाँ की यात्रा करता है तथा जो जितेन्द्रिय भाव से विषुवयोग में श्रद्धा के साथ विधिपूर्वक बिन्दुसरोवर में स्नान करके तिल और जल से नाम-गोत्र के उच्चारणपूर्वक देवताओं, ऋषियों, मनुष्यों एवं पितरों का तर्पण करता है, वह अश्वमेध-यज्ञ का फल पाता है। अन्य शुभ तिथियों में जो दान आदि करते हैं वे अन्य तीर्थों से सौ-गुना फल पाते हैं।(ब्र. पु. 41/51-59)

एकाम्रक्षेत्रस्थ बिन्दुसर में स्नान के पश्चात् मौन एवं जितेन्द्रिय भाव से भगवान् शिव के मन्दिर में प्रवेश करके उनकी पूजा करें तथा तीन बार प्रदक्षिणा करें। घी, दूध आदि के द्वारा स्नान कराकर सुगन्धित चंदन एवं केसर लगायें। तदनन्तर नाना प्रकार के फूलों तथा बिल्वपत्र, आक और कमल आदि के द्वारा वैदिक एवं तान्त्रिक मन्त्रों से तथा नाममय मूलमंत्र से गन्ध, पुष्प, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य, उपहार, स्तुति, दण्डवत्-प्रणाम, मनोहर गीत-वाद्य, नृत्य, जप, नमस्कार, जय शब्द तथा प्रदक्षिणा समर्पण करते हुए महादेवजी का पूजन करें। इस प्रकार पूजन करनेवाला सब पापों से मुक्त हो शिवलोक में जाता है।(ब्र. पु. 41/60-69)

जो उत्तम बुद्धिवाले पुरुष वहाँ हर समय महादेवजी का दर्शन करते हैं वे भी पापमुक्त हो शिवलोक जाते हैं। भगवान् शिव से चारों दिशाओं में ढाई-ढाई योजनतक का वह क्षेत्र भोग एवं मोक्ष देनेवाला है। उस उत्तम क्षेत्र में भास्करेश्वर नाम से प्रसिद्ध एक शिवलिंग है।

तस्मिन्क्षेत्रवरे लिङ्गं भास्करेश्वरसंज्ञितम् (ब्र. पु. 41/76)

जो लोग वहाँ कुण्ड में स्नान करके भगवान् सूर्य द्वारा पूजित महादेवजी का दर्शन करते हैं, वे सब पापों से मुक्त हो शिवलोक चले जाते हैं। भगवान् शिव का एकाम्रक क्षेत्र वाराणसी के समान शुभ है। जो वहाँ स्नान करता है, वह निश्चय ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है।(ब्र. पु. 41/76-77, 93)

अन्य तीर्थ अवन्तीपुरी में भगवान् शिव महाकाल नाम से प्रसिद्ध होकर रहते हैं। वे समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। वहाँ एक शिवकुण्ड है, जो सब पापों का नाश करनेवाला है। उसमें विधिपूर्वक स्नान करके देवताओं, ऋषियों और पितरों का तर्पण करें। फिर शिवालय में जाकर भगवान्

शिव की तीन बार प्रदक्षिणा करें। तत्पश्चात् स्नान, पुष्प, गन्ध, धूप और दीप आदि के द्वारा भक्तिपूर्वक महाकाल की विधिवत् पूजा करें। ऐसा करनेवाला एक हजार अश्वमेध-यज्ञों का फल पाता है। वह सब पापों से मुक्त हो समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाले विमानों द्वारा भगवान् शिव के परम धाम में जाता है।

तत्राऽऽस्ते भगवान्देवस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः।।
महाकालेति विख्यातः सर्वकामप्रदः शिवः।

...

संपूज्य विधिवद्भक्त्या महाकालं सकृच्छिवम्।
अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः।। (ब्रह्म पु. 43/65-70)

पुरुषोत्तमक्षेत्र में मार्कण्डेयजी ने भुवनेश्वर लिंग की स्थापना की और उसके उत्तर में एक सुन्दर सरोवर का भी निर्माण कराया जिसे मार्कण्डेयह्रद के नाम से जाना जाता है। मार्कण्डेयह्रद में जाकर मनुष्य उत्तराभिमुख हो तीन बार डुबकी लगाये और निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करे-

संसारसागरे मग्नं पापग्रस्तमचेतनम्।
त्राहि मां भगनेत्रघ्न त्रिपुरारे नमोऽस्तु ते।।
नमः शिवाय शान्ताय सर्वपापहराय च।
स्नानं करोमि देवेश मम नश्यतु पातकम्।। (ब्र. पु. 57/3-4)

भावार्थ है- "भग के नेत्रों का नाश करनेवाले त्रिपुरशत्रु भगवान् शिव! मैं संसार-सागर में निमग्न, पापग्रस्त एवं अचेतन हूँ। आप मेरी रक्षा कीजिये। आपको नमस्कार है। समस्त पापों को दूर करनेवाले शान्तस्वरूप शिव को नमस्कार है। देवेश्वर! मैं यहाँ स्नान करता हूँ। मेरा सारा पातक नष्ट हो जाय।"

स्नान के पश्चात् देवताओं और ऋषियों का विधिपूर्वक तर्पण करें। फिर तिल और जल लेकर पितरों की भी तृप्ति करें। उसके बाद आचमन करके शिवमन्दिर में जायँ। उसके भीतर प्रवेश करके तीन बार देवता की परिक्रमा करें। तदनन्तर **'मार्कण्डेयेश्वराय नमः'** इस मूलमन्त्र से अथवा अघोरमन्त्र[1] से शंकरकी पूजा करके उन्हें प्रणाम करें और निम्नांकित मन्त्र पढ़कर उन्हें प्रसन्न करें-

त्रिलोचन नमस्तेऽस्तु नमस्ते शशिभूषण।
त्राहि मां त्वं विरूपाक्ष महादेव नमोऽस्तु ते।। (ब्र. पु. 57/8)

भावार्थ है-तीन नेत्रोंवाले शंकर! आपको नमस्कार है, चन्द्रमा को भूषणरूप में धारण

1. "ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।" इस मन्त्र को ही अघोर-मन्त्र कहा जाता है।

करनेवाले! आपको नमस्कार है। विकट नेत्रोंवाले शिवजी! आप मेरी रक्षा कीजिये। महादेव! आपको नमस्कार है।

इस प्रकार मार्कण्डेयह्रद में स्नान करके भगवान् शंकर का दर्शन करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो शिवलोक में जाता है।[1]

रामेश्वर तीर्थ की महिमा के बारे में कहा गया है कि – समुद्र के तटपर रामेश्वर नाम से विख्यात भगवान् शिव विराजमान हैं, जो समस्त अभिलषित फलों के देनेवाले हैं। जो समुद्र में स्नान करके वहाँ श्रीरामेश्वर का दर्शन करते और गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, नमस्कार, स्तोत्र, गीत और मनोहर वाद्यों द्वारा उनकी पूजा करते हैं, वे महात्मा पुरुष राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञों का फल पाते और परम सिद्धि को प्राप्त होते हैं।

आस्ते तत्र महादेवस्तीरे नदनदीपतेः।।
रामेश्वर इति ख्यातः सर्व्वकामफलप्रदः।

....

राजसूयफलं सम्यग्वाजिमेधफलं तथा।
प्राप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां तथा।। (ब्रह्मपु. 28/56-59)

पुनः इस पुराण में श्वेततीर्थ तथा मृत्युतीर्थ का वर्णन किया गया है जहाँ स्नान-दान सब पापों का नाश करनेवाला, अन्तःकरण के मल को धो डालनेवाला और भोग तथा मोक्ष प्रदान करनेवाला है। श्वेततीर्थ से आगे शुक्रतीर्थ है। इसका दूसरा नाम मृत्यु-संजीवनी तीर्थ भी है। वह आयु और आरोग्य की वृद्धि करनेवाला है। वहाँ किया गया शुभकर्म अक्षय पुण्य देनेवाला है। उपरोक्त तीर्थों के अलावा गोदावरी तटवर्ती अनेक तीर्थों का वर्णन है। उदाहरण के लिये इलातीर्थ, चक्रतीर्थ, पिप्पलतीर्थ, नागतीर्थ, मातृतीर्थ, शेषतीर्थ, रामतीर्थ, लक्ष्मणतीर्थ, पुत्रतीर्थ, इन्द्रेश्वरतीर्थ, आपस्तम्बतीर्थ, किष्किन्धातीर्थ तथा व्यासतीर्थ इत्यादि।

तीर्थ का फल किसे प्राप्त होता है? इस प्रश्न के उत्तर में लोमहर्षणजी मुनियों से कहते हैं-जिसके हाथ, पैर और मन काबू में हों तथा जिसमें विद्या, तप और कीर्ति हो, वह मनुष्य तीर्थ के फल का भागी होता है। पुरुष का शुद्ध मन, शुद्ध वाणी, तथा वश में की हुई इन्द्रियाँ-ये शारीरिक तीर्थ हैं, जो स्वर्ग का मार्ग सूचित करती हैं। भीतर का दूषित चित्त तीर्थस्नान से शुद्ध नहीं होता। जिसका अन्तःकरण दूषित है, जो दम्भ में रुचि रखता है तथा जिसकी इन्द्रियाँ चंचल हैं, उसे तीर्थ, दान, व्रत और आश्रम भी पवित्र नहीं कर सकते। मनुष्य इन्द्रियों को अपने वश में करके जहाँ-जहाँ निवास करता है, वहीं-वहीं कुरूक्षेत्र, पुष्कर और प्रयाग आदि तीर्थ वास करने लगते हैं। अतः तीर्थसेवन के

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 367 या ब्र. पु. 57/9-10 देखें।

पूर्ण फल का भागी होने के लिये इन्द्रियों के संयमपूर्वक तीर्थ का सेवन करना चाहिये।[1] (ब्र. पु. 25/2-6)

इस पुराण में कुछ अच्छे स्तोत्र भी दिये गये हैं जिनके पाठ से कई लौकिक फल प्राप्त होते हैं और अन्त में मोक्ष भी प्राप्त हो जाता है। भगवान् शिव का विवाह हो जाने पर इन्द्रादि देवगणों ने उनकी स्तुति की। इस स्तुति का श्रवण या पाठ करनेवाला सम्पूर्ण लोकों में जाने की शक्ति प्राप्त करता तथा देवराज इन्द्र की भाँति देवताओं द्वारा पूजित होता है। स्तुति इस प्रकार है-

नमः पर्वत लिङ्गाय ....।
नमः पवनवेगाय विरूपायाजिताय च.............।।

..

शिव सौम्यमुखो द्रष्टुं भव सौम्यो हि नः प्रभो।। (ब्रह्मपुराण 37/2-23)

यज्ञविध्वंस के पश्चात् दक्ष-प्रजापति द्वारा शिव की 1008 नामों द्वारा जो स्तुति की गयी है उसके पाठ से अमंगल का नाश हो दीर्घायु प्राप्त होती है। जैसे सम्पूर्ण देवताओं में भगवान् शिव श्रेष्ठ हैं उसी प्रकार सब स्तोत्रों में यह स्तोत्र। यश, स्वर्ग, देवों का ऐश्वर्य, धन, विजय और विद्याभिलाषी को यह स्तोत्र उपयोगी है। रोगी, दुःखी, दीन, भयग्रस्त, राज-काज में नियुक्त भयमुक्त होता है तथा शिवलोक में सुख पाकर गणों का स्वामी बनता है। यक्ष, पिशाच, नाग और विनायक विघ्न नहीं डालते। व्यक्ति सब पापों से मुक्त हो जाता है। मनुष्य चाहे वह वैश्य, स्त्री वा शूद्र कोई भी हो उसे रुद्रलोक की प्राप्ति होती है। स्तोत्र इस प्रकार है-

नमस्ते देवदेवेश नमस्तेऽन्धकसूदन।
देवेन्द्र त्वं बलश्रेष्ठ देवदानवपूजित।।

..

प्रसीद मम देवेश त्वमेव शरणं मम।
त्वं गतिस्त्वं प्रतिष्ठा च न चान्योऽस्तीति मे मतिः।। (ब्रह्मपुराण 40/2-100)

दण्डकारण्य से पाँच योजन आगे गोदावरी के तटपर रामजी ने भगवान् शिवकी पूजा-स्तुति की थी। इस स्तुति द्वारा भगवान् शिव प्रसन्न हो स्तोता के सारे कार्य सिद्ध कर देते हैं। इस रामतीर्थ पर रामजी द्वारा किया गया स्तोत्र इस प्रकार है-

नमामि शंभुं पुरुषं पुराणं, नमामि सर्वज्ञमपारभावम्।
नमामि रुद्रं प्रभुमक्षयं तं, नमामि शर्वं शिरसा नमामि।।

..

1. मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक पृ. 316 भी देखें।

.... **संपूजितं सोममहं नमामि।।** (ब्र. पु. 123/195-206)

पुत्रतीर्थ के प्रसंग में भगवान् शिव कश्यप-दिति से कह रहे हैं कि जो दिति और गौतमी गंगा(गोदावरी) के संगम में स्नान करके अनादि, अपार, अजर, सच्चिदानंदमय, लिंगस्वरूप, ज्योतिर्मय तथा अनामय महादेव भगवान् सिद्धेश्वर का अनेक उपचारों से भक्तिपूर्वक पूजन करता है, चतुर्दशी और अष्टमी को कश्यपकृत स्तोत्र(ब्र. पु. 124/94-99)[1] द्वारा स्तुति करता है तथा यहाँ गोदावरीतट पर ब्राह्मणों को अपनी शक्ति के अनुसार सुवर्ण देता और भोजन कराता है, उसे अनेक पुत्र प्राप्त होते हैं। वह सम्पूर्ण अभिलषित वस्तुओं को प्राप्त करके अन्त में शिवधाम को जाता है। जो इस स्तोत्र के द्वारा कहीं भी मेरी छ: महीने स्तुति करता है, उसे पुत्र प्राप्त होता है। यदि उसकी स्त्री बन्ध्या हो, तो भी वह नि:सन्देह पुत्रवती होती है।(ब्रह्मपुराण अ. 124/133-136)

उपरोक्त सभी स्तोत्रों को यहाँ स्थानाभाव से लिखना संभव नहीं है। इच्छुक पाठक उन्हें ऊपर दिये गये संदर्भों के माध्यम से आसानी से मूल ग्रन्थ में ढूँढ़ सकते हैं।

अन्त में एक बार हम फिर याद दिला दें कि इस पुराण में मुख्यत: शिवलिंग पूजा का ही प्राधान्य है। उपरोक्त जिन तीर्थों का वर्णन किया गया है वहाँ पर शिवलिंग की ही पूजा की चर्चा है। गोदावरी-सागर संगम पर ब्रह्माजी तथा हिमालय ने, पुरुषोत्तमक्षेत्र में मार्कण्डेयजी ने, राम ने रामेश्वर तथा दण्डकारण्य से पाँच योजन दूर गोदावरीतटपर तथा वहीं पर लक्ष्मण आदि ने भी शिवलिंग की स्थापना की थी। इसी प्रकार लिंगस्थापन के अन्य अनेकों उदाहरण इस पुराण में पाये जाते हैं ।

त्रिदेवों की एकता तथा भगवान् शिव का माहात्म्य

व्यासतीर्थ के संदर्भ में एक प्रसंग आता है कि अंगिरसों ने अनेक स्थानों में जाकर तपस्या की, किंतु उन्हें कहीं भी सिद्धि नहीं मिली। इस प्रकार भटकते हुए सब अंगिरस अगस्त्यजी के पास गये और उनसे सिद्धि के बारे में पूछा। इसपर अगस्त्यजी ने उन्हें गोदावरी के तट पर किसी पावन आश्रम के भीतर ज्ञानद गुरु की पूजा का उपदेश दिया और कहा कि वे आपसबलोगों की सभी शंकाओं का निवारण करेंगे। तब अंगिरसों ने महर्षि अगस्त्य से पूछा-'ज्ञानद किसको कहते हैं?' ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदित्य, चन्द्रमा, अग्नि और वरुण-इनमें कौन ज्ञानद है? अगस्त्यजी उन्हें ज्ञानद का स्वरूप

1. स्तोत्र इस प्रकार है-

पाहि शंकर देवेश पाहि लोक नमस्कृत। पाहि पावन वागीश पाहि पन्नगभूषण।।
पाहि धर्म वृषारूढ पाहि वेदत्रयेक्षण। पाहि गोधरलक्ष्मीश पाहि शर्व गजाम्बर।।
पाहि त्रिपुरहन्नाथ पाहि सोमार्धभूषण। पाहि यज्ञेश सोमेश पाह्यभीष्टप्रदायक।।
पाहि कारुण्यनिलय पाहि मङ्गलदायक। पाहि प्रभव सर्वस्य पाहि पालक वासव।।
पाहि भास्कर वित्तेश पाहि ब्रह्मनमस्कृत। पाहि विश्वेश सिद्धेश पाहि पूर्ण नमोऽस्तु ते।।
घोरसंसारकान्तारसंचारोद्विग्नचेतसाम्। शरीरिणां कृपासिन्धो त्वमेव शरणं शिव।।

(ब्र. पु. 124/94-99)

बताते हैं। वे कहते हैं-जो जल है, वही अग्नि है। जो अग्नि है, वही सूर्य कहलाता है। जो सूर्य है, वही विष्णु है और जो विष्णु है, वही सूर्य। जो ब्रह्मा हैं, वही रुद्र हैं। जो रुद्र हैं, वही सब कुछ हैं। इस प्रकार जिसको एक की सर्वरूपता का ज्ञान हो, उसी को ज्ञानद कहते हैं। देशिक(उपदेशक), प्रेरक, व्याख्याकार, उपाध्याय और शरीर का जनक आदि बहुत से गुरु हैं; किन्तु उनमें जो ज्ञानदाता गुरु है, वह सबसे बड़ा है। यहाँ उस ज्ञान की बात कही गयी है, जिससे भेद-बुद्धि का नाश हो। एकमात्र अद्वितीय शिव ही सब कुछ हैं। विद्वान् ब्राह्मण उन्हीं का इन्द्र, मित्र और अग्नि आदि अनेक नामों से वर्णन करते हैं। अनेक नाम और अनेक रूपों में जो भगवान् के तत्त्व का वर्णन किया जाता है, वह अज्ञानी जनों का उपकार करने के लिये है।(ब्रह्मपु. अध्याय 158/22-27)

ते तमूचुर्मुनिवरं ज्ञानदः कोऽभिधीयते।
ब्रह्मा विष्णुर्महेशो वा आदित्यो वाऽपि चन्द्रमाः।।
अग्निश्च वरुणः कः स्याज्ज्ञानदो मुनिसत्तम।
अगस्त्यः पुनरप्याह ज्ञानदः श्रूयतामयम्।।
या आपः सोऽग्निरित्युक्तो योऽग्निः सूर्यः स उच्यते।
यश्च सूर्यः स वै विष्णुर्यश्च विष्णुः स भास्करः।।
यश्च ब्रह्मा स वै रुद्रौ यो रुद्रः सर्वमेव तत्।
यस्य सर्वं तु तज्ज्ञानं ज्ञानदः सोऽत्र कीर्त्यते।।
देशिकप्रेरकव्याख्याकृदुपाध्यायदेहदाः।
गुरवः सन्ति बहवस्तेषां ज्ञानप्रदो महान्।।
तदेव ज्ञानमत्रोक्तं येन भेदो विहन्यते।
एक एवाद्वयः शंभुरिन्द्रमित्राग्निनामभिः।
वदन्ति बहुधा विप्रा भ्रान्तोपकृतिहेतवे।। (ब्र. पु. 158/22-27)

प्रलयकाल में मार्कण्डेयजी को जब बालमुकुंद के दर्शन हुए तब उन्होंने बालरूपधारी भगवान् नारायण से उनकी माया तथा उनके स्वरूप को जानने का अनुरोध किया। तब भगवान् ने अपनी माया तथा स्वरूप का ज्ञान प्रदान करने के बाद मार्कण्डेयजी से वरदान माँगने को कहा। तब मार्कण्डेजी भगवान् से यह कहते हैं कि- "नाथ! अब मैं आपकी कृपा से यह चाहता हूँ कि संपूर्ण लोकों के हित, भिन्न-भिन्न भावनाओं की पूर्ति तथा शैव एवं वैष्णवों के विवाद-निवारण के लिये मैं इस परम उत्तम पवित्र पुरुषोत्तमतीर्थ में भगवान् शिव का बहुत बड़ा मंदिर बनवाऊँ और उसमें शंकरजी की प्रतिष्ठा करूँ। इससे संसार के लोग यह जान लेंगे कि विष्णु और शिव एकरूप ही हैं।" यह सुनकर भगवान् जगन्नाथ ने पुनः मार्कण्डेयजी से कहा- "ब्रह्मन्! तुम मेरी आज्ञा से शीघ्र ही एक मंदिर बनवाओ और उसमें नाना भावों की पूर्ति एवं आराधना के लिये परमकारणभूत भुवनेश्वर लिंग की स्थापना करो।

उनके प्रभाव से तुम्हारा भगवान् शिव के लोक में अक्षय निवास होगा। शिव की स्थापना करने पर मेरी ही स्थापना होती है। हम दोनों में तनिक भी अन्तर नहीं है। हम एक ही तत्त्व दो रूपों में व्यक्त हुए हैं। जो रुद्र हैं, वही विष्णु हैं; जो विष्णु हैं, वही महादेव हैं। वायु और आकाश की भाँति हम दोनों में कोई अन्तर नहीं है। जो अज्ञान से मोहित है, वह इस बात को नहीं जानता कि जो गरुडध्वज हैं, वही वृषभध्वज हैं।" (ब्र. पु. अध्याय 56/63-71)।

शिवे संस्थापिते विप्र मम संस्थापनं भवेत्।
नाऽऽवयोरन्तरं किंचिदेकभावौ द्विधा कृतौ।।
यो रुद्रः स स्वयं विष्णुर्यो विष्णुः स महेश्वरः।
उभयोरन्तरं नास्ति पवनाकाशयोरिव।।
मोहितो नाभिजानाति य एव गरुडध्वजः।
वृषध्वजः स एवेति त्रिपुरघ्नं त्रिलोचनम्।। (ब्र. पु. अध्याय 56/69-71)

युद्ध में श्रीकृष्ण जब बाणासुर को मारने के लिये उद्यत होते हैं तब भगवान् शंकर कृष्णजी से कहते हैं कि मैंने बाणासुर को अभय दे रक्खा है अत: आपको मेरी बात असत्य नहीं करनी चाहिये। भगवान् शंकर के ऐसा कहने पर भगवान् कृष्ण शिवजी से कहते हैं-कि आपने जो अभयदान दिया है, वह मैंने भी दिया। आप अपने को मुझसे पृथक न देखें। जो मैं हूँ, वही आप हैं और वही यह देवता, असुर तथा मनुष्योंसहित सम्पूर्ण जगत् भी है। जिनका चित्त अविद्या से मोहित है, वे ही पुरुष भेददृष्टि रखनेवाले होते हैं।[1]

त्वया यदभयं दत्तं तद्दत्तमभयं मया।
मत्तोऽविभिन्नमात्मानं द्रष्टुमर्हसि शंकर।।
योऽहं स त्वं जगच्चेदं सदेवासुरमानुषम्।
अविद्यामोहितात्मानः पुरुषा भिन्नदर्शिनः।। (ब्र. पु. 206/47-48)

जो परम तत्त्व है उसके अनेकों नाम हैं। कोई उन्हें सदाशिव तो कोई उन्हें महाविष्णु तो कोई उन्हें ब्रह्म तो कोई उन्हें महाशक्ति तो कोई उन्हें अव्यक्त कहते हैं। उसी एक तत्त्व से सभी चराचर जगत् की सृष्टि, पालन एवं संहार होता है। इस पुराण के प्रथम अध्याय (श्लोक 22-24) में कहा गया है कि "जो ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप से जगत् की उत्पत्ति, पालन तथा संहार करनेवाले हैं, तथा जो भक्तों को संसार-सागर से तारनेवाले हैं, उन भगवान् को प्रणाम है। जो एक होकर भी अनेक रूप

---

1. भगवान् शिव एवं कृष्ण का यह व्यवहार एवं वार्तालाप संसार की लीला में लोकोपकार, आदर्श स्थापन एवं लोक-शिक्षा के लिये है। वास्तव में इन दोनों देवों में कोई अन्तर नहीं है। भगवान् के विभिन्न रूपों के व्यवहारों के पीछे छिपे गूढ़ रहस्य एवं प्रयोजनों को समझने के लिये भगवद्कृपा एवं गंभीर चिन्तन, मनन एवं अध्ययन अपेक्षित है।

धारण करते हैं, स्थूल और सूक्ष्म सब जिनके ही स्वरूप हैं, जो व्यक्त(कार्य) और अव्यक्त(कारण) रूप तथा मोक्ष के हेतु हैं, उन भगवान् विष्णु को नमस्कार है।" इस प्रार्थना में परम तत्त्व को विष्णु संज्ञा से संबोधित किया गया है और बताया गया है कि वह विष्णु ही ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवरूप से प्रकट होता है। यहाँ विष्णु शब्द को दो अर्थों में प्रयोग किया गया है। एक अर्थ में विष्णु को परम तत्त्व के रूप में, दूसरे अर्थ में विष्णु को एक देवतारूप में जो जगत् का पालन करते हैं। इस प्रार्थना में तीनों देवताओं की तात्त्विक एकता को प्रकट किया गया है।

आपस्तम्ब तीर्थ के प्रसंग में एक कथा आती है। शिष्योंसहित मुनीश्वर आपस्तम्ब अगस्त्यजी से पूछते हैं- "मुनिवर! तीनों देवताओं में कौन पूज्य है? अनादि और अनन्त कौन है? तथा वेदों में किसका यशोगान किया गया है?" इन प्रश्नों के उत्तर में अगस्त्यजी कहते हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि में शब्द प्रमाण बतलाया जाता है। उसमें भी वैदिक शब्द सबसे श्रेष्ठ प्रमाण है। वेद के द्वारा जिनका यशोगान होता है, वे परात्पर पुरुष परमात्मा हैं। जो मृत्यु के अधीन होता है, उसे अपर(क्षर पुरुष) जानना चाहिये और जो अमृत है, उसे पर(अक्षर पुरुष) कहते हैं। अमृत के भी दो स्वरूप हैं- मूर्त ओर अमूर्त। जो अमूर्त(निराकार) है, उसे परब्रह्म जानना चाहिये और मूर्त को अपर ब्रह्म कहते हैं। गुणों की व्यापकता के अनुसार मूर्त के भी तीन भेद हैं- ब्रह्मा, विष्णु और शिव। ये एक होते हुए भी तीन कहलाते हैं। इन तीनों देवताओं का भी वेद्यतत्त्व एक ही है। उसे ही परब्रह्म कहते हैं। गुण और कर्म के भेद से एक की ही अनेक रूपों में अभिव्यक्ति होती है। लोकों का उपकार करने के लिये एक ही ब्रह्म के तीन रूप हो जाते हैं। जो इस परम तत्त्व को जानता है, वही विद्वान् है, दूसरा नहीं। जो इन तीनों में भेद बतलाता है, उसे लिंगभेदी कहते हैं। उसके लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं है।

ब्रह्मा विष्णुः शिवश्चेति एक एव त्रिधोच्यते।
त्रयाणामपि देवानां वेद्यमेकं परं हि तत्।।
लोकानामुपकारार्थमाकृतित्रितयं भवेत्।।
यस्तत्त्वं वेत्ति परमं स च विद्वान्न चेतरः।
तत्र यो भेदमाचष्टे लिङ्गभेदी स उच्यते।।
प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति यश्चैषां व्याहरेद्भिदाम्। (ब्र. पु. 130/10-13)

अगस्त्यजी आगे कहते हैं- तीनों देवताओं के रूप एक दूसरे से भिन्न और पृथक्-पृथक् हैं। सम्पूर्ण साकार रूपों में पृथक्-पृथक् वेद प्रमाण हैं। जो निराकार तत्त्व है, वह एक है। वह उन तीनों की अपेक्षा उत्कृष्ट माना गया है।(ब्र. पु. 130/13-14)

इस उत्तर को सुनकर आपस्तम्ब स्पष्टरूप से न समझ सके कि तीनों में से किस देव की पूजा की जाय। तब वे पुनः अगस्त्यजी से बोले- "इससे मैं किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका। इसमें जो रहस्य की बात हो, उसे विचारकर बतलाइये।"

तब अगस्त्यजी कहते हैं– "यद्यपि इन देवताओं में परस्पर कोई भेद नहीं है, तथापि सुखस्वरूप शिव से ही सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। मुने! पराभक्ति के साथ भगवान् शिव की ही आराधना करो।"

यद्यप्येषां न भेदोऽस्ति देवानां तु परस्परम्।
तथापि सर्वसिद्धिः स्याच्छिवादेव सुखात्मनः।।
प्रपञ्चस्य निमित्तं यत्तज्ज्योतिश्च परं शिवः।
तमेव साधय हरं भक्त्या परमया मुने।। (ब्रह्मपु. 130/17-18)

अगस्त्यजी के कहने का अभिप्राय यह है कि यद्यपि देवों में परस्पर भेद नहीं है और सब एक हैं फिर भी निराकार तत्त्व के शिव-रूप की अर्चना करने से शीघ्र ही आसानी से सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। क्योंकि भगवान् शिव करुणा के सागर एवं शीघ्र प्रसन्न होनेवाले हैं और दुःखी जनों के एकमात्र शरण-स्थल हैं।

शंकरः सर्वभूतात्मा करुणावरुणालयः।।
सर्वेषां सर्वदाऽऽर्त्तानां शिव एव परा गतिः।। (ब्रह्मपु.109/37; तथा 111/79)

उपरोक्त कुछ उद्धरणों में भगवान् विष्णु एवं शिव की एवं कुछ में तीनों देवों की एकता का स्पष्टरूप से प्रतिपादन किया गया है। तत्त्वतः तीनों देवों में कोई भेद नहीं है फिर भी जगत्प्रक्रिया में तीनों की अलग-अलग भूमिका होती है। एक ही निर्गुण तत्त्व जगत् में अपने को तीन प्रकार के कार्यों के लिये तीन रूप धारण कर लेता है। इन तीनों रूपों में शिवरूप की विशेषता यह है कि उसकी उपासना से शीघ्र एवं आसानी से सिद्धि प्राप्त हो जाती है क्योंकि वे औढरदानी एवं आशुतोष हैं।

उपसंहार

भगवान् शिव को इस पुराण में परब्रह्म परमेश्वर स्वीकार किया गया है। यह स्वीकृति स्वयं ब्रह्माजी, भगवान् राम, इन्द्र सहित समस्त देवगण, दक्ष प्रजापति, महर्षि अगस्त्य, बृहस्पति, आपस्तम्ब एवं भगवान् श्रीकृष्ण इत्यादि जैसे लोगों की है। इन लोगों की स्तुतियाँ एवं पाये जानेवाले अन्य प्रकीर्ण सन्दर्भ इस तथ्य के प्रमाण हैं। भगवान् शिव ही ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप से जगत्चक्र की व्यवस्था करते हैं। वे भोग एवं मोक्ष के दाता तथा दीन-दुःखियों के शरण-स्थल हैं। वे शीघ्र प्रसन्न होनेवाले हैं। उनकी लिंगरूप में उपासना श्रेष्ठ बतायी गयी है। नाना प्रकार के शैव-तीर्थों यथा एकाम्रकक्षेत्र, अवन्तीपुरी, भुवनेश्वर, श्वेततीर्थ, शुक्रतीर्थ, इलातीर्थ, चक्रतीर्थ, पिप्पलतीर्थ, नागतीर्थ, मातृतीर्थ, शेषतीर्थ, रामतीर्थ, पुत्रतीर्थ, इन्द्रेश्वरतीर्थ, आपस्तंबतीर्थ, किष्किंधातीर्थ, व्यासतीर्थ आदि का भी वर्णन है। इनमें से अधिकांश तीर्थ गोदावरी के किनारे हैं। इन तीर्थों का संबंध किसी न किसी ऐसे व्यक्ति से है जिसने वहाँ या तो उपासना की है या सिद्धि प्राप्त की है।

उदाहरण के लिये चक्रेश्वर तीर्थ में भगवान् श्रीहरि ने शिवोपासना से सुदर्शन चक्र प्राप्त किया,

शुक्रतीर्थ में शुक्राचार्य ने मृतसंजीवनी विद्या प्राप्त की, इला तीर्थ में इला ने भगवान् शिव की उपासना से पुरुषत्व की प्राप्ति की, रामेश्वर एवं रामतीर्थ में भगवान् राम ने शिव की उपासना कर मनोवांछित फल प्राप्त किया, श्वेततीर्थ में राजा श्वेत ने मृत्यु को जीता, गौतम ने गोदावरी को प्राप्त किया जो गंगा की तरह पवित्र है तथा उसके किनारे-किनारे सर्वत्र तीर्थ हैं। भगवान् शिव की उपासना सभी लोग- ब्रह्मा, विष्णु, रामचन्द्र जैसे भगवानों, इन्द्रादि देवताओं, बृहस्पति एवं शुक्राचार्य जैसे गुरुओं, गौतम एवं अगस्त्य जैसे ऋषियों, भगीरथ जैसे राजाओं, श्वेत जैसे ब्राह्मणों, शेष जैसे नागों, मार्कण्डेय जैसें मुनियों, दक्ष जैसे प्रजापतियों और गरुड़ जैसे पक्षियों आदि ने की है।

इस पुराण में भी अन्य पुराणों की भाँति विष्णु एवं शिवजी अथवा ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की तात्त्विक एकता का प्रतिपादन हुआ है। एक ही मूलतत्त्व, 'सदाशिव', जो निर्गुण है, अपने को जगत् की लीला के संचालन के लिये तीन रूपों में प्रकट करता है। ये तीनों देव-रूप समान होते हुए भी उपासना की दृष्टि से शिव-रूप ज्यादा उपयुक्त है। क्योंकि भगवान् शिव की उपासना आसानी से शीघ्र सिद्धिप्रद है। इसका कारण यह है कि शिवरूप ज्यादा करुणामय, कल्याणमय एवं भक्तवत्सल है। जरा सी स्तुति या तपस्या से प्रसन्न हो जानेवाला रूप है। इस पुराण में कई उपयोगी स्तोत्र भी हैं जिनमें से दक्षप्रजापति द्वारा किया गया सहस्त्रनाम स्तोत्र ज्यादा उल्लेखनीय है।

(प्रस्तुत लेख हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 1976 में प्रकाशित 'ब्रह्मपुराणम्' तथा गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित संक्षिप्त 'मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणांक' के तीसरे संस्करण पर आधारित है।)

S S S S S S S S

मद्य का निषेध

अदेयं वाप्यपेयं वा तथैवास्पृश्यमेव वा।
द्विजातीनामनालोक्यं नित्यं मद्यमिति स्थितिः।।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन मद्यं नित्यं विवर्जयेत्।
पीत्वा पतति कर्मभ्यस्त्वसंभाष्यो भवेद्द्विजः।

(पद्ममहापु. स्वर्गखण्ड 56/43-44)

द्विजातियों के लिये मदिरा किसी को देना, स्वयं उसे पीना, उसका स्पर्श करना तथा उसकी ओर देखना भी मना है-पाप है; उससे सदा दूर ही रहना चाहिये-यही सनातन मर्यादा है। इसलिये पूर्ण प्रयत्न करके सर्वदा मद्य का त्याग करे। जो द्विज मद्य-पान करता है, वह द्विजोचित कर्मों से भ्रष्ट हो जाता है; उससे बात भी नहीं करनी चाहिये।